

दवाओं की कीमतों का कड़वा सच



हाल ही में उच्चतम न्यायालय ने पाया कि कुछ दवाओं के खुदरा मूल्य (प्राइस टू रिटेलर) और मैक्सिमम रिटेल प्राइस (एमआरपी) के बीच भारी अंतर है। खासकर कैंसर के इलाज में इस्तेमाल होने वाली दवाओं में यह अंतर कई मामलों में 1,000% तक है। यह स्थिति मरीजों पर अनावश्यक आर्थिक बोझ डालती है।

- **समस्या कैसे पैदा होती है?** - कई महंगी दवाएँ सीधे मेडिकल स्टोर से खरीदने वाली दवाएँ नहीं होतीं। अस्पताल यह तय करता है कि मरीज को कौन-सी कंपनी की दवा दी जाएगी। इससे कंपनियों के बीच प्रतिस्पर्धा मरीज के बजाय अस्पताल को अपने उत्पाद की ओर आकर्षित करने की हो जाती है।

इस प्रकार कंपनी अस्पताल को अधिक मार्जिन देती है, और अस्पताल के पास उस ब्रांड को प्राथमिकता देने का आर्थिक प्रोत्साहन पैदा हो जाता है।

- **यह गुम चोट जैसा क्यों है?** - भले ही यह तकनीकी रूप से सीधे चोट न हो, आर्थिक रूप से इसका प्रभाव वैसा ही है। निर्माता अस्पताल को अधिक मार्जिन का लाभ देकर अपने उत्पाद को चुनने के लिए प्रेरित करता है। इसका अंतिम भार मरीज पर पड़ता है।

समस्या तब और गंभीर भी हो जाती है, जब निजी अस्पताल मरीजों को अपनी फार्मसी से ही दवा खरीदने के लिए मजबूर करते हैं। इससे मरीज दूसरे दुकानदारों से सस्ती दवा खरीदने का विकल्प खो देता है, और सामान्य बाजार प्रतिस्पर्धा खत्म हो जाती है।

- **2013 के दवा मूल्य-नियंत्रण आदेश की कमी** - दवा (मूल्य नियंत्रण) आदेश, 2013 निर्धारित दवाओं के अंतिम अधिकतम मूल्य पर सीमा लगाता है। लेकिन अस्पताल और निर्माता के बीच होने वाले वास्तविक लेन-देन में कितना मार्जिन रखा जा रहा है, उसे प्रभावी ढंग से नियंत्रित नहीं करता है।

यही वजह है कि एमआरपी कानूनी सीमा के भीतर रहते हुए भी अस्पताल और निर्माता के बीच कीमत का बड़ा अंतर पैदा हो सकता है।

- **एनपीपीए का प्रयोग क्या बताता है?** - 2019 में नेशनल फार्मास्यूटिकल्स प्राइसिंग अथॉरिटी (एनपीपीए) ने 42 गैर-सूचीबद्ध कैंसर दवाओं पर ट्रेड मार्जिन को 30% तक सीमित करने का प्रयोग किया था। इसके बाद फार्मास्यूटिकल्स विभाग के अनुसार 526 ब्रांडों की कीमतों में 91% तक की कमी आई थी।

इससे यह संकेत मिलता है कि कई दवाओं के एमआरपी में वास्तव में बहुत बड़ा और कम किया जा सकने वाला मार्जिन मौजूद था।

- **सुप्रीम कोर्ट का हस्तक्षेप क्यों महत्वपूर्ण है?** - सुप्रीम कोर्ट ने इस समस्या को इसलिए गंभीरता से लिया है, क्योंकि दवा कोई सामान्य उपभोक्ता वस्तु नहीं है। मरीज, विशेषकर कैंसर और अन्य गंभीर बीमारियों से जूझ रहे लोग, दवा की कीमत को लेकर सामान्य उपभोक्ता की तरह आसानी से विकल्प नहीं चुन सकते।

जब मरीज के पास विकल्प सीमित हों, और दवा जीवन के लिए आवश्यक हो, तब अत्यधिक मुनाफाखोरी का सामाजिक प्रभाव बहुत गंभीर हो जाता है।

महंगी दवाओं के कारण मरीज इलाज अधूरा छोड़ सकता है, दवाओं की खुराक कम कर सकता है, लंबे उपचार से बच सकता है, या परिवार की आर्थिक बचत खत्म कर सकता है। इसलिए दवा की कीमत केवल बाजार और मुनाफे का विषय नहीं, बल्कि स्वास्थ्य और सामाजिक न्याय का भी प्रश्न है।

- **सिर्फ समान मार्जिन पर्याप्त नहीं** - अतः सभी दवाओं पर केवल एक समान प्रतिशत मार्जिन तय करना पर्याप्त नहीं होगा। इसके बजाय प्रतिगामी मार्जिन अपनाया जाना चाहिए; अर्थात् जैसे-जैसे दवा की कीमत बढ़े, उस पर मार्जिन का प्रतिशत घटता जाए।
- **व्यापक नीति-स्तरीय संदेश** - इस पूरे मामले से एक बड़ी बात सामने आती है कि स्वास्थ्य क्षेत्र में सामान्य बाजार-तंत्र हमेशा नहीं चल सकता है।

- सामान्य बाजार में उपभोक्ता अलग-अलग दुकानों और उत्पादों की कीमत की तुलना कर सकता है। लेकिन अस्पताल में भर्ती गंभीर मरीज के पास ऐसा विकल्प अक्सर नहीं होता। इसलिए सरकार को ऐसी व्यवस्था बनानी होगी, जिसमें प्राइस टू रिटेलर और एमआरपी के बीच अत्यधिक अंतर पर नियंत्रण हो।
- अस्पतालों के दवा-मार्जिन में पारदर्शिता हो।
- मरीज को अपनी पसंद की फार्मसी से दवा खरीदने की स्वतंत्रता मिले।
- समान कॉम्पोजिशन वाली सस्ती दवाओं को अनावश्यक रूप से हतोत्साहित न किया जाए।
- महंगी दवाओं पर घटता हुआ यानी प्रतिगामी तंत्र लागू किया जाए।
- अस्पतालों और दवा कंपनियों के आर्थिक संबंधों की निगरानी हो।

सुप्रीम कोर्ट का हस्तक्षेप इसलिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि दवा का एमआरपी नियंत्रित होना पर्याप्त नहीं है; मरीज तक दवा किस कीमत पर पहुँचती है, यह भी उतना ही महत्वपूर्ण है।

इसलिए दवा मूल्य-नियमन का लक्ष्य केवल एमआरपी की सीमा तय करना नहीं, बल्कि पूरे प्राइसिंग श्रृंखला में पारदर्शिता और उचित मार्जिन सुनिश्चित करना होना चाहिए। गंभीर बीमारी से जूझ रहे व्यक्ति के लिए दवा पहले इलाज है, व्यापारिक लाभ का माध्यम बाद में।

'द हिंदू' में प्रकाशित संपादकीय पर आधारित। 01/10/26

AFEIAS